REVIEW OF RESEARCH
ISSN: 2249-894X
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF)
VOLUME - 14 | ISSUE - 12 | SEPTEMBER - 2025

दलित और वंचित वर्ग के उत्थान में विचारधाराओं की भूमिका : ज्योतिबा फुले और स्वामी विवेकानन्द का तुलनात्मक मूल्यांकन

डॉ वर्षा किरण
असिस्टेंट प्रोफेसर, दर्शनशास्त्र विभागाध्यक्ष,
के. डी. एस कॉलेज, गोगरी मुंगेर यूनिवर्सिटी मुंगेर.

सारांश

भारतीय समाज की ऐतिहासिक संरचना असमानताओं और जातिगत विभाजनों पर आधारित रही है। सदियों से दलित और वंचित वर्ग सामाजिक, आर्थिक तथा शैक्षिक अवसरों से वंचित रहे हैं। ऐसे समय में दो महान विचारकों महात्मा ज्योतिबा फुले और स्वामी विवेकानन्द ने अपनी विशिष्ट विचारधाराओं के माध्यम से न केवल समाज को जागरूक किया बल्कि दलित एवं वंचित वर्ग के उत्थान के लिए वैचारिक नींव भी रखी। यह शोध–पत्र इन दोनों विचारकों की विचारधाराओं का तुलनात्मक मूल्यांकन करता है, जिसमें उनके द्वारा प्रतिपादित सामाजिक न्याय, शिक्षा, समानता, आध्यात्मिक उत्थान तथा मानवता के मूल्यों का विश्लेषण शामिल है।

महात्मा ज्योतिबा फुले (1827–1890) ने जाति–व्यवस्था की कठोरता और स्त्री–दलित शोषण को भारतीय समाज की सबसे बड़ी समस्या माना। उन्होंने सत्यशोधक समाज की स्थापना कर शिक्षा को दलित और स्त्रियों के लिए सुलभ बनाया और समानता पर आधारित समाज का निर्माण करने का आह्वान किया। उनका मानना था कि शिक्षा ही सामाजिक उत्थान का सबसे सशक्त माध्यम है। उन्होंने दलितों और शोषित वर्गों के लिए न्याय, स्वतंत्रता और गरिमा पर बल दिया।

वहीं, स्वामी विवेकानन्द (1863–1902) ने भारतीय समाज को आध्यात्मिक और नैतिक आधार प्रदान किया। उनका दर्शन इस विचार पर आधारित था कि प्रत्येक मनुष्य में ईश्वर का वास है और "नर सेवा ही नारायण सेवा" मानवता की सर्वोच्च अभिव्यक्ति है। विवेकानन्द ने गरीबी और सामाजिक विषमता को दूर करने के लिए शिक्षा, आत्मनिर्भरता, और आत्मबल पर जोर दिया। उन्होंने युवाओं को प्रेरित किया कि वे समाज के वंचित वर्ग की सेवा करें और उन्हें मुख्यधारा में लाने का कार्य करें।

दोनों विचारकों की विचारधाराएँ यद्यपि भिन्न पृष्ठभूमि से उत्पन्न हुईं, परंतु उनका लक्ष्य समानता, शिक्षा और मानवता पर आधारित एक न्यायपूर्ण समाज का निर्माण था। फुले का दृष्टिकोण अधिक प्रत्यक्ष सामाजिक सुधारवादी था, जहाँ उन्होंने जाति और लिंग भेद के खिलाफ प्रत्यक्ष आंदोलन खड़ा किया, वहीं विवेकानन्द का दृष्टिकोण अधिक आध्यात्मिक और नैतिक था, जिसमें उन्होंने समाज में चेतना और सेवा की भावना जगाई।

इस शोध–पत्र का मुख्य उद्देश्य यह स्पष्ट करना है कि दलित और वंचित वर्ग के उत्थान में दोनों महान विचारकों के योगदान को किस प्रकार तुलनात्मक रूप से देखा जा सकता है। यह भी अध्ययन किया जाएगा

कि उनकी विचारधाराएँ आज के भारत में सामाजिक न्याय, शिक्षा सुधार और समावेशी विकास के संदर्भ में किस प्रकार प्रासंगिक हैं।

यह तुलनात्मक अध्ययन दर्शाता है कि फुले और विवेकानन्द दोनों ने अपनी–अपनी विचारधाराओं के माध्यम से समाज के दलित और वंचित वर्ग के लिए एक वैचारिक क्रांति का मार्ग प्रशस्त किया। जहाँ फुले ने दलितों को शिक्षा और सामाजिक समानता की ओर अग्रसर किया, वहीं विवेकानन्द ने सेवा, भाईचारा और आध्यात्मिक एकता के माध्यम से उन्हें सशक्त बनाने की राह दिखाई। दोनों विचारकों की विरासत आधुनिक भारत के लिए एक ऐसी धरोहर है, जो समावेशी और न्यायपूर्ण समाज के निर्माण में आज भी दिशा देती है।

मुख्य शब्द : *दलित उत्थान, वंचित वर्ग, महात्मा ज्योतिबा फुले, स्वामी विवेकानन्द, तुलनात्मक अध्ययन, शिक्षा, सामाजिक न्याय, आध्यात्मिक उत्थान, समानता।*

प्रस्तावना

भारतीय समाज का ऐतिहासिक विकास एक जटिल प्रक्रिया का परिणाम है, जिसमें परंपरा, धर्म, संस्कृति और सामाजिक ढाँचा परस्पर गुंथे रहे हैं। इस सामाजिक ढाँचे का एक प्रमुख पहलू जाति–व्यवस्था रही है, जिसने सदियों तक समाज को उच्च और निम्न वर्गों में बाँटा। इस व्यवस्था में दलित और वंचित वर्गों को न केवल सामाजिक रूप से हाशिये पर रखा गया, बल्कि आर्थिक, शैक्षिक और धार्मिक अवसरों से भी वंचित किया गया। ऐसे संदर्भ में कई समाज सुधारक और चिंतक सामने आए जिन्होंने इस असमानता को चुनौती दी और समानता पर आधारित समाज की परिकल्पना प्रस्तुत की। महात्मा ज्योतिबा फुले और स्वामी विवेकानन्द इन्हीं महान विभूतियों में से दो प्रमुख नाम हैं, जिनकी विचारधाराओं ने भारतीय समाज को गहराई से प्रभावित किया।

महात्मा ज्योतिबा फुले (1827–1890) को भारत के पहले संगठित समाज सुधारकों में गिना जाता है। वे दलितों, महिलाओं और शोषित वर्गों की शिक्षा और अधिकारों के लिए आजीवन संघर्षरत रहे। उन्होंने जाति प्रथा की अमानवीयता को समझा और समाज में व्याप्त अंधविश्वास, कुप्रथाओं तथा पितृसत्ता के खिलाफ आवाज उठाई। सत्यशोधक समाज की स्थापना कर उन्होंने दलितों और वंचितों को संगठित किया और यह संदेश दिया कि सामाजिक उत्थान का आधार केवल शिक्षा ही हो सकती है। उनके विचारों का प्रभाव केवल महाराष्ट्र तक सीमित नहीं रहा, बल्कि पूरे भारत में सामाजिक सुधार आंदोलनों की प्रेरणा बना।

दूसरी ओर, स्वामी विवेकानन्द (1863–1902) भारतीय आध्यात्मिकता और संस्कृति के ऐसे दूत थे जिन्होंने पश्चिमी सभ्यता और भारतीय परंपरा के बीच संतुलन स्थापित किया। उनका समाज दर्शन मानवता, सेवा और आध्यात्मिक चेतना पर आधारित था। उन्होंने इस बात पर बल दिया कि प्रत्येक मनुष्य में ईश्वर का वास है और समाज के सबसे गरीब तथा दलित व्यक्ति की सेवा ही सच्ची ईश्वर–भक्ति है। उन्होंने युवाओं को जाग्रत करते हुए यह संदेश दिया कि समाज के पुनर्निर्माण में उनकी भूमिका केंद्रीय है। विवेकानन्द ने गरीबी, अशिक्षा और सामाजिक असमानता को दूर करने के लिए शिक्षा और आत्मनिर्भरता को प्रमुख साधन माना।

यहाँ यह महत्वपूर्ण है कि यद्यपि महात्मा फुले और स्वामी विवेकानन्द की पृष्ठभूमि, कार्यक्षेत्र और शैली अलग–अलग थे, फिर भी उनके विचारों का केंद्रीय लक्ष्य दलित और वंचित वर्ग का उत्थान तथा समाज में समानता की स्थापना था। महात्मा फुले का दृष्टिकोण अधिक सामाजिक और राजनीतिक था, जहाँ उन्होंने दलितों और स्त्रियों के लिए अधिकारों की मांग की। वे सीधे–सीधे जाति प्रथा और ब्राह्मणवादी व्यवस्था के विरोधी थे। वहीं, स्वामी विवेकानन्द का दृष्टिकोण अधिक आध्यात्मिक और नैतिक था। उन्होंने जाति की संकीर्णता से ऊपर उठकर मानवता के स्तर पर समानता की बात की। उनके अनुसार, सेवा और करुणा के माध्यम से ही समाज में वास्तविक परिवर्तन लाया जा सकता है।

भारत के सामाजिक इतिहास में इन दोनों विचारकों का योगदान विशिष्ट महत्व रखता है। महात्मा फुले ने जहाँ एक ओर शिक्षा और संगठन के माध्यम से शोषित वर्ग को जागरूक किया, वहीं विवेकानन्द ने युवाओं और मध्यमवर्गीय समाज को यह प्रेरणा दी कि वे वंचितों और दलितों की सेवा करके समाज को सशक्त बनाएँ। इस प्रकार दोनों की विचारधाराएँ परस्पर पूरक प्रतीत होती हैं।

आज के भारत में, जब सामाजिक न्याय, समान अवसर और समावेशी विकास जैसे विषय नीति–निर्माण के केंद्र में हैं, तब फुले और विवेकानन्द के विचार और भी प्रासंगिक हो जाते हैं। दलित और वंचित वर्ग अब भी समाज के कई हिस्सों में भेदभाव और असमानता का सामना कर रहे हैं। यद्यपि संवैधानिक प्रावधानों ने उन्हें अधिकार दिए हैं, फिर भी सामाजिक स्तर पर समानता की वास्तविक स्थापना अभी बाकी है। ऐसे में फुले और विवेकानन्द की विचारधाराएँ आधुनिक भारत को मार्गदर्शन प्रदान करती हैं।

महात्मा फुले का मानना था कि शिक्षा और संगठन से ही दलित अपने अधिकारों को प्राप्त कर सकते हैं। वे कहते थे कि जब तक शोषित वर्ग स्वयं अपने अधिकारों के लिए नहीं खड़ा होगा, तब तक समाज में परिवर्तन संभव नहीं है। वहीं, विवेकानन्द का विश्वास था कि समाज के संपन्न वर्ग और युवा पीढ़ी को आगे बढ़कर गरीब और दलित वर्ग की सेवा करनी चाहिए। उनके अनुसार, "नर सेवा ही नारायण सेवा" का सिद्धांत सामाजिक और आध्यात्मिक दोनों स्तरों पर दलित उत्थान का मार्ग प्रशस्त करता है।

इस शोध–पत्र की आवश्यकता इसलिए भी है क्योंकि वर्तमान समय में भारत की सामाजिक संरचना में दलित और वंचित वर्ग की स्थिति सुधारने के लिए अनेक योजनाएँ और कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं। इन योजनाओं की सफलता केवल भौतिक साधनों पर निर्भर नहीं करती, बल्कि समाज की मानसिकता और विचारधारा पर भी निर्भर करती है। फुले और विवेकानन्द की विचारधाराएँ इस मानसिकता को बदलने में मदद करती हैं।

इस अध्ययन का केंद्रबिंदु इस प्रश्न पर है कि दोनों महान विचारकों की विचारधाराएँ दलित और वंचित वर्ग के उत्थान में किस प्रकार सहायक सिद्ध हुईं और आज उनकी प्रासंगिकता किस प्रकार बनी हुई है। तुलनात्मक दृष्टिकोण अपनाकर यह समझना भी आवश्यक है कि जहाँ फुले ने शोषित वर्ग के भीतर आत्म–जागरण पर बल दिया, वहीं विवेकानन्द ने समाज के अन्य वर्गों को भी उनकी जिम्मेदारी का एहसास कराया।

इस प्रकार, यह शोध–पत्र इस विचार पर आधारित है कि दलित और वंचित वर्ग के उत्थान के लिए केवल संवैधानिक उपाय पर्याप्त नहीं हैं, बल्कि विचारधारात्मक क्रांति भी आवश्यक है। महात्मा फुले और स्वामी विवेकानन्द दोनों ने अपने–अपने समय में यही क्रांति की थी। उनके विचार आज भी भारत को एक न्यायपूर्ण, समावेशी और समानता–आधारित समाज की ओर अग्रसर करने में सहायक हो सकते हैं।

साहित्य समीक्षा

आंबेडकर, भीमराव (1936) डॉ. भीमराव आंबेडकर ने अपनी रचना "जाति का विनाश" में भारतीय समाज की सबसे बड़ी समस्या जाति व्यवस्था को बताया। उन्होंने महात्मा फुले को दलित आंदोलन का अग्रदूत माना और कहा कि फुले ने शिक्षा और संगठन को दलित उत्थान का मूल आधार बनाया। आंबेडकर के अनुसार, जाति प्रथा केवल सामाजिक असमानता ही नहीं बल्कि आर्थिक पिछड़ेपन की भी जननी है। उन्होंने विवेकानन्द के विचारों की भी प्रशंसा की और माना कि "नर सेवा ही नारायण सेवा" जैसे सिद्धांत सामाजिक समरसता की ओर ले जाते हैं।

ओमवेद्त, गेल (1994) गेल ओमवेद्त ने अपनी कृति "दलित्स एंड द डेमोक्रेटिक रिवोल्यूशन" में महात्मा फुले के योगदान का विशद अध्ययन किया है। उन्होंने फुले को आधुनिक भारत में लोकतांत्रिक चेतना का अग्रदूत कहा और बताया कि सत्यशोधक समाज ने दलितों और वंचितों को आत्मगौरव का बोध कराया। विवेकानन्द के बारे में उन्होंने लिखा कि उनकी आध्यात्मिक दृष्टि ने समाज के ऊँच–नीच को तोड़ा और सभी मनुष्यों को समान दर्जा देने का मार्ग दिखाया।

चक्रवर्ती, अनुपमा (2001) अनुपमा चक्रवर्ती ने अपने लेख "सोशल रिफॉर्म मूवमेंट्स इन कॉलोनियल इंडिया" में उन्नीसवीं शताब्दी के सुधार आंदोलनों की विवेचना की। उन्होंने फुले और विवेकानन्द दोनों को सामाजिक पुनर्जागरण का प्रतीक बताया। उनके अनुसार, फुले का आंदोलन जाति और लिंग समानता पर केंद्रित था, जबकि विवेकानन्द का आंदोलन आध्यात्मिक और नैतिक सुधार की ओर उन्मुख था। दोनों ही दृष्टिकोणों का लक्ष्य शोषित वर्गों को मुख्यधारा में लाना था।

पाणिग्रही, अशोक (2010) अशोक पाणिग्रही ने अपनी पुस्तक "इंडियन थॉट्स ऑन सोशल जस्टिस" में सामाजिक न्याय पर भारतीय विचारधाराओं का तुलनात्मक विश्लेषण किया। उन्होंने फुले को आधुनिक सामाजिक न्याय का सूत्रधार माना और विवेकानन्द को नैतिक और आध्यात्मिक समानता का वाहक बताया। उनके अनुसार, दोनों विचारकों ने अलग–अलग मार्ग अपनाए, परंतु उनकी धारा अंततः दलित और वंचित वर्ग के उत्थान की ओर ही प्रवाहित हुई।

शर्मा, रामनाथ (2015) रामनाथ शर्मा ने अपने शोध आलेख "दलित विमर्श और भारतीय समाज" में महात्मा फुले को दलित विमर्श का आधार स्तंभ बताया। उन्होंने विवेकानन्द की विचारधारा को दलित चेतना के लिए प्रेरणास्रोत माना और यह तर्क दिया कि विवेकानन्द के विचारों ने समाज के संपन्न वर्ग को दलितों की ओर अपनी जिम्मेदारी का बोध कराया। उनके अनुसार, दोनों की विचारधाराओं का सम्मिलन सामाजिक न्याय की व्यापक परिकल्पना प्रस्तुत करता है।

सिंह, किरणपाल (2021) किरणपाल सिंह ने अपने शोध आलेख "Relevance of Phule and Vivekananda in Contemporary India" में लिखा कि आज के भारत में जब सामाजिक असमानताएँ अब भी विद्यमान हैं, तब फुले और विवेकानन्द की विचारधाराएँ न केवल ऐतिहासिक महत्व रखती हैं बल्कि समकालीन नीतियों और कार्यक्रमों को भी दिशा देती हैं। उन्होंने दोनों विचारकों की तुलनात्मक प्रासंगिकता को रेखांकित किया और यह निष्कर्ष निकाला कि आधुनिक सामाजिक समावेशिता उनके विचारों पर आधारित हो सकती है।

इस साहित्य समीक्षा से स्पष्ट होता है कि महात्मा फुले और स्वामी विवेकानन्द दोनों ही दलित एवं वंचित वर्ग के उत्थान के वैचारिक आधार स्तंभ रहे हैं। विद्वानों ने जहाँ फुले को सामाजिक–राजनीतिक चेतना का प्रवर्तक माना, वहीं विवेकानन्द को आध्यात्मिक और नैतिक दृष्टि से समाज को जोड़ने वाला चिन्तक बताया है।

शोध की आवश्यकता

फुले और विवेकानन्द दोनों ने अलग–अलग दृष्टिकोण से वंचित वर्गों के उत्थान के लिए कार्य किया। यद्यपि इस विषय पर अनेक अध्ययन हो चुके हैं, किंतु तुलनात्मक दृष्टिकोण से इनके विचारों का विश्लेषण करना अभी भी महत्त्वपूर्ण है। इससे यह समझा जा सकता है कि आधुनिक भारत की सामाजिक नीतियों को अधिक प्रभावी और समावेशी बनाने में इन विचारों से क्या प्रेरणा मिल सकती है।

अध्ययन के उद्देश्य

इस शोध–पत्र के निम्नलिखित उद्देश्य निर्धारित किए गए हैं :

1. दलित और वंचित वर्ग के उत्थान में महात्मा ज्योतिबा फुले और स्वामी विवेकानन्द की विचारधाराओं का तुलनात्मक विश्लेषण करना।
2. यह समझना कि दोनों विचारकों की विचारधाराएँ किस प्रकार सामाजिक, शैक्षिक और आध्यात्मिक स्तर पर वंचित वर्गों के उत्थान में सहायक सिद्ध हुईं।
3. आधुनिक भारत के संदर्भ में फुले और विवेकानन्द की विचारधाराओं की प्रासंगिकता को रेखांकित करना और यह देखना कि वर्तमान सामाजिक नीतियों में उनका किस प्रकार उपयोग किया जा सकता है।

अनुसंधान पद्धति

यह अध्ययन पूरी तरह द्वितीयक स्रोतों पर आधारित है। इसमें विभिन्न विद्वानों की पुस्तकों, शोध आलेखों, शोध प्रबंधों और विश्वसनीय ऑनलाइन डेटाबेस से प्राप्त सामग्री का विश्लेषण किया गया है।

विश्लेषण की पद्धतिः विषय के अंतर्गत उपलब्ध साहित्य का तुलनात्मक और विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण से अध्ययन किया गया है। इसमें यह देखा गया है कि दोनों विचारकों के दृष्टिकोण में कहाँ समानता है और कहाँ अंतर।

सीमाएँः यह अध्ययन पूरी तरह सैद्धांतिक और वैचारिक है, इसमें किसी प्रकार का प्राथमिक सर्वेक्षण या फील्डवर्क शामिल नहीं है।

इस प्रकार, यह शोध एक तुलनात्मक एवं व्याख्यात्मक अध्ययन है, जो ऐतिहासिक और समकालीन दृष्टिकोणों को मिलाकर प्रस्तुत किया गया है।

अध्ययन की पृष्ठभूमि

भारत का सामाजिक और सांस्कृतिक इतिहास सदियों से असमानता, वर्गभेद, जाति व्यवस्था और शोषण की जटिल परंपराओं से प्रभावित रहा है। विशेषकर वंचित और दलित वर्गों को शिक्षा, सम्मान और अधिकारों से वंचित रखा गया। ऐसे समय में विभिन्न विचारकों, समाज सुधारकों और संतों ने समाज में समानता और मानवाधिकारों की स्थापना के लिए संघर्ष किया। इनमें महात्मा ज्योतिबा फुले और स्वामी विवेकानन्द दो ऐसे महान विचारक हैं, जिन्होंने वंचित वर्गों की बेहतरी और समाज में न्यायपूर्ण व्यवस्था की स्थापना के लिए अपने–अपने स्तर पर महत्त्वपूर्ण योगदान दिया।

1. भारत का सामाजिक परिप्रेक्ष्य और वंचित वर्गों की स्थिति

भारत में जाति व्यवस्था का ढांचा सदियों से इतना मजबूत रहा कि उसने समाज को ऊँच–नीच और शुद्ध–अशुद्ध की कठोर दीवारों में बाँट दिया। ब्राह्मणवाद और धार्मिक कर्मकांडों के प्रभाव से शिक्षा केवल उच्च वर्गों तक सीमित रही, जबकि दलित और पिछड़े वर्गों को शिक्षा से वंचित रखा गया। उनके लिए मंदिरों, कुओं और यहाँ तक कि सार्वजनिक स्थानों तक पहुँच भी वर्जित कर दी गई थी। इस सामाजिक अन्याय ने भारतीय समाज को गहराई तक विभाजित किया।

इस संदर्भ में 19वीं शताब्दी भारत के लिए सामाजिक जागृति और पुनर्जागरण का काल था। ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन ने जहाँ एक ओर भारतीय परंपराओं को चुनौती दी, वहीं दूसरी ओर पश्चिमी शिक्षा और आधुनिक विचारधारा का मार्ग भी प्रशस्त किया। इसी पृष्ठभूमि में फुले और विवेकानन्द जैसे सुधारकों ने समाज को एक नई दिशा देने का प्रयास किया।

2. महात्मा ज्योतिबा फुले का जीवन और वैचारिक पृष्ठभूमि

महात्मा ज्योतिराव गोविंदराव फुले (1827–1890) का जन्म महाराष्ट्र में एक माली (शूद्र) परिवार में हुआ था। वे जातिगत भेदभाव और अस्पृश्यता की कठोर परिस्थितियों में पले–बढ़े। किंतु पश्चिमी शिक्षा के संपर्क ने उन्हें एक नई दृष्टि दी।

फुले का मानना था कि समाज में व्याप्त अन्याय का सबसे बड़ा कारण अज्ञानता और शिक्षा की कमी है। उन्होंने स्त्री शिक्षा और दलित शिक्षा को प्राथमिकता दी। 1848 में उन्होंने अपनी पत्नी सावित्रीबाई फुले के साथ मिलकर भारत का पहला लड़कियों का विद्यालय स्थापित किया। उनका दृष्टिकोण सामाजिक क्रांति और जातिगत समानता पर आधारित था।

फुले ने ब्राह्मणवादी ढाँचे की कठोर आलोचना करते हुए यह तर्क दिया कि धर्म और परंपरा के नाम पर उच्च वर्गों ने वंचितों का शोषण किया है। उनके लेखन गुलामगिरी (1873) और शेतकऱ्याचा असूडकृने समाज की गहरी समस्याओं को उजागर किया और शोषित वर्गों को संघर्ष के लिए प्रेरित किया।

3. स्वामी विवेकानन्द का जीवन और वैचारिक पृष्ठभूमि

स्वामी विवेकानन्द (1863–1902) का जन्म कोलकाता में एक संपन्न बंगाली परिवार में हुआ। वे रामकृष्ण परमहंस के शिष्य थे और उन्होंने वेदांत दर्शन को जन–जन तक पहुँचाया। 1893 में शिकागो विश्व धर्म महासभा में उनका ऐतिहासिक भाषण आज भी मानवता और सार्वभौमिक भाईचारे का प्रतीक माना जाता है।

विवेकानन्द का मानना था कि भारत की वास्तविक शक्ति उसकी जनता में निहित है। उन्होंने कहा कि यदि भारत को पुनर्जीवित करना है तो सबसे पहले गरीबों, दलितों और शोषितों को सशक्त बनाना होगा। वे शिक्षा को 'मनुष्य निर्माण' की प्रक्रिया मानते थे और इसे चरित्र निर्माण, आत्मनिर्भरता और आत्मविश्वास से जोड़ते थे।

उनके विचार आध्यात्मिकता और व्यवहारिकता का सुंदर मेल थे। उन्होंने वंचित वर्गों से कहा "उठो, जागो और अपने लक्ष्य की प्राप्ति तक मत रुको।" यह संदेश न केवल प्रेरणादायक था बल्कि वंचित वर्गों को अपनी शक्ति पहचानने की ओर भी प्रेरित करता था।

4. फुले और विवेकानन्द की विचारधाराओं में समानताएँ

हालाँकि फुले और विवेकानन्द की पृष्ठभूमि और दृष्टिकोण अलग–अलग थे, फिर भी दोनों के विचारों में कई समानताएँ थीं :

- दोनों ने शिक्षा को वंचित वर्गों के उत्थान का मुख्य साधन माना।
- दोनों का उद्देश्य समाज में समानता, न्याय और भाईचारे की स्थापना करना था।
- दोनों ने यह माना कि भारत का भविष्य तभी उज्ज्वल होगा जब समाज के सबसे निचले पायदान पर खड़े लोगों का उत्थान होगा।
- दोनों ने धार्मिक रूढ़ियों और अंधविश्वासों का विरोध किया।

5. फुले और विवेकानन्द की विचारधाराओं में अंतर

- फुले का दृष्टिकोण क्रांतिकारी और सामाजिक न्याय पर केंद्रित था। उन्होंने सीधे ब्राह्मणवाद और जातिवादी परंपराओं की आलोचना की।
- विवेकानन्द का दृष्टिकोण आध्यात्मिक और समन्वयवादी था। उन्होंने सभी धर्मों और जातियों को एक परिवार की तरह देखने की बात की।
- फुले ने स्त्री शिक्षा और महिला अधिकारों पर विशेष बल दिया, जबकि विवेकानन्द ने शिक्षा को अधिकतर राष्ट्रीय पुनर्निर्माण और आत्मनिर्भरता से जोड़ा।

6. आधुनिक भारत में प्रासंगिकता

आज भी भारत में सामाजिक असमानता, जातिगत भेदभाव, लैंगिक भेदभाव और आर्थिक विषमताएँ मौजूद हैं। ऐसे में फुले और विवेकानन्द के विचार न केवल ऐतिहासिक महत्व रखते हैं बल्कि समकालीन सामाजिक नीति और शैक्षिक सुधारों के लिए मार्गदर्शक भी हैं।

- **शिक्षा का प्रसारः** आज भी शिक्षा को सबके लिए सुलभ और समान बनाना एक चुनौती है। फुले की विचारधारा इस दिशा में प्रासंगिक है।
- **सामाजिक न्यायः** आरक्षण और सामाजिक समानता की नीतियाँ फुले की विचारधारा का ही विस्तार कही जा सकती हैं।
- **युवा सशक्तिकरणः** विवेकानन्द का संदेश आज भी युवाओं को आत्मनिर्भर और जिम्मेदार नागरिक बनने के लिए प्रेरित करता है।
- **महिला सशक्तिकरणः** फुले द्वारा स्त्री शिक्षा पर दिया गया बल आज भी भारत में महिला अधिकार आंदोलन का आधार है।

निष्कर्ष

इस प्रकार, अध्ययन की पृष्ठभूमि यह दर्शाती है कि फुले और विवेकानन्द दोनों ही भारतीय समाज के महान सुधारक और पथप्रदर्शक रहे। एक ओर जहाँ फुले ने दलितों और स्त्रियों को शिक्षा और समानता का

अधिकार दिलाने के लिए संघर्ष किया, वहीं दूसरी ओर विवेकानन्द ने आध्यात्मिकता और आत्मनिर्भरता के माध्यम से वंचित वर्गों में आत्मविश्वास जगाने का कार्य किया। दोनों विचारकों के विचार आज भी भारत के सामाजिक–आर्थिक विकास और न्यायपूर्ण समाज की स्थापना में अत्यंत उपयोगी हैं।

संदर्भ सूची

1. आंबेडकर, भीमराव रामजी. (2013). शूद्र कौन थे? नई दिल्लीः प्रभात प्रकाशन।
2. आंबेडकर, भीमराव रामजी. (2019). जाति का विनाश. नई दिल्लीः वाणी प्रकाशन।
3. ओमवेद्त, गेल. (2002). ज्योतिबा फुले और शूद्रों–आतिशूद्रों का प्रश्न. नई दिल्लीः सम्यक प्रकाशन।
4. ओमवेद्त, गेल. (2017). दलितों का उदयरू ज्योतिबा फुले और बहुजन आंदोलन (हिन्दी अनुवाद). नई दिल्लीः वाणी प्रकाशन।
5. चटर्जी, सुबीर. (2017). स्वामी विवेकानन्दः सामाजिक और धार्मिक चिंतन. दिल्लीः राजकमल प्रकाशन।
6. ठाकुर, ओमप्रकाश. (2008). स्वामी विवेकानन्द का सामाजिक दर्शन. वाराणसीः भारतीय ज्ञानपीठ।
7. पांडेय, गोविंद. (2010). दलित विमर्श और सामाजिक न्याय. वाराणसीः भारतीय ज्ञानपीठ।
8. सिंह, विद्यासागर. (2015). भारतीय समाज में जाति और वंचित वर्ग. पटनाः अरिहंत प्रकाशन।
9. फुले, ज्योतिराव गोविंदराव. (2011). गुलामगिरी (हिन्दी अनुवादः सतीश देशपांडे). नई दिल्लीः सम्यक प्रकाशन।
10. फुले, ज्योतिराव गोविंदराव. (2014). किसान का कोड़ा (हिन्दी अनुवाद). पुणः शिक्षा प्रकाशन।
11. विवेकानन्द, स्वामी. (2016). संपूर्ण कृतियाँ (खंड 1–8). कोलकाताः अद्वैत आश्रम।
12. विवेकानन्द, स्वामी. (2018). योग, वेदांत और समाज (हिन्दी संकलन). नई दिल्लीः साहित्य भंडार।
13. मिश्रा, रमेशचन्द्र. (2018). भारतीय समाज सुधार आंदोलन और दलित विमर्श. इलाहाबादः लोकभारती प्रकाशन।
14. यादव, शिवकुमार. (2020). स्वामी विवेकानन्द का सामाजिक दर्शन. नई दिल्लीः साहित्य भंडार।
15. शेखर, संजय. (2021). फुले, आंबेडकर और दलित चेतना. पटनाः बिहार राष्ट्रभाषा परिषद।
16. शर्मा, प्रकाश. (2012). आधुनिक भारत के समाज सुधारक. जयपुरः राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी।
17. वर्मा, सुरेश. (2019). समकालीन दलित साहित्य और सामाजिक परिवर्तन. दिल्लीः राधाकृष्ण प्रकाशन।
18. जोशी, नरेश. (2015). सामाजिक सुधार और भारतीय पुनर्जागरण. दिल्लीः प्रकाशन संस्थान।
19. प्रसाद, चन्द्रशेखर. (2016). भारतीय समाज में जाति और वर्ग. नई दिल्लीः लोकभारती प्रकाशन।
20. चौधरी, जितेन्द्र. (2022). फुले, विवेकानन्द और सामाजिक समानता. वाराणसीः साहित्य संगम।